ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

अपने समय का सूर्य: रामधारी सिंह दिनकर

Dr. Rita Pandey

Dept. of Hindi, Shri Lal Bahadur Shastri Degree College, Gonda, Uttar Pradesh, India

सारांश

रामधारी सिंह दिनकर हिंदी के उन गिनेचुने कवियों में एक थे जिनकी कविताओ में एक ओर ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रान्ति का तेज है तो दूसरी ओर कोमल श्रृंगारिक भावनाओं और प्रेम की इतनी कोमल अभिव्यक्ति जिसकी बारीकी पढ़ने वालों को स्तब्ध करती है। उनका 'कुरुक्षेत्र' श्रेष्ठ ओजपूर्ण काव्यों में और 'उर्वशी' श्रेष्ठ श्रृंगारिक काव्यों में शुमार होते हैं। दोनों काव्य रचनाएं उनके व्यक्तित्व के दो ऐसे ध्रुव है जिनके अंतर्संघर्ष की बुनियाद पर उनका विराट काव्य-संसार खड़ा है। हिदी कविता में शब्दों की असीम ताकत और नैसर्गिक प्रवाह देखना हो तो दिनकर के काव्य-संसार से बेहतर कोई जगह नहीं मिलेगी। दिनकर की बहुआयामी प्रतिभा चकित करती है। रेणुका', 'हुंकार', 'रश्मिरथी', 'हारे को हरिनाम', 'कुरुक्षेत्र' और 'उर्वशी' के कवि दिनकर एक उत्कृष्ट निबंधकार, विचारक और इतिहासकार भी थे। उनकी कुछ गद्य रचनाओं-'मिट्टी की ओर', अर्धनारीश्वर', 'रेती के फूल', 'वेणुवन' और 'संस्कृति के चार अध्याय' में भारत की संस्कृति अपनी पूरी गरिमा के साथ मुखर है। मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूँ मैं

उर्वशी, अपने समय का सूर्य हूँ मैं

अंध तम के भाल पर पावक जलाता हूं

बादलों के सीस पर स्यंदन चलाता हूं

पर, न जानें, बात क्या है

इन्द्र का आयुध पुरुष जो झेल सकता है

सिंह से बांहें मिलाकर खेल सकता है

फूल के आगे वही असहाय हो जाता

शक्ति के रहते हुए निरुपाय हो जाता

विद्ध हो जाता सहज बंकिम नयन के बाण से

जीत लेती रूपसी नारी उसे मुस्कान से.

मैं तुम्हारे बाण का बींधा हुआ खग

वक्ष पर धर शीश मरना चाहता हूं

मैं तुम्हारे हाथ का लीला कमल हूं

प्राण के सर में उतरना चाहता हूं

चाहिए देवत्व,

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

पर, इस आग को धर दूं कहां पर

कामनाओं को विसर्जित व्योम में कर दूं कहां पर ?

वह्नि का बेचैन यह रसकोष, बोलो कौन लेगा

आग के बदले मुझे संतोष ,बोलो कौन देगा ?

फिर दिशाए मौन, फिर उत्तर नहीं है !

परिचय

साहित्य जगत में छायावादोत्तर हिंदी काव्यधारा का एक ऐसा सूर्य जो आज से करीब सात दशक पहले जितनी प्रखरता से साहित्य संसार को देदीप्यमान कर रहा था,वर्तमान में भी उस प्रखरता में कोई कमी नहीं आयी है।

आप रामधारी सिंह दिनकर को साहित्यकारों के प्रत्येक विशेषण कवि,लेखक, आलोचक,निबंधकार सभी से विभूषित कर सकते हैं। वीर रस से लेकर श्रृंगार रस तक, करुण रस से लेकर शांत रस तक का रसपान दिनकर की रचनाओं में सहजता से किया जा सकता है। दिनकर ने साहित्य के दस रसों में से एक वीर रस को एक नई ऊंचाई प्रदान करते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का भी सृजन करने का काम किया। कहा जाता है कि राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर राष्ट्रकवि से ज्यादा जनकवि थे। उनके दिल में सर्वहारा के लिये दर्द भी था तो किसानों की दुर्दशा के प्रति टीस भी,एक तरफ जहां इतिहास उनको कुरेदते रहता था तो दूसरी तरफ वर्तमान उन्हें झकझोरता था। आजादी के लिये कलम से क्रांति का बिगुल फूंकने वाले इस महान विभूति की आज 111 वीं जयंती है 23 सितम्बर 1908 ई0 को बिहार राज्य के बेगूसराय जिला अंतर्गत सिमरिया ग्राम में एक साधारण भूमिहार ब्राह्मण परिवार में इनका जन्म हुआ था। सिमरिया गंगा के तट पर बसा मिथिला का एक पवित्र तीर्थस्थल जहां आज भी कल्पवास के लिये लोग पवित्र भावनाओं के साथ जुटते हैं । दिनकर इसी गांव के सुपुत्र थे। ये अपने पिता बाबू रवि सिंह व माता मनरूप देवी की दूसरी संतान थे।दिनकर के जन्म के एक वर्ष बाद ही इनके पिता का देहांत हो गया था। आर्थिक विषमताओं के बीच इनका लालन पालन सम्पन्न हुआ। प्रारंभिक शिक्षा बगल के बोरो गांव में हुई बाद में मोकामा से 1928 में मैट्रिक की परीक्षा पास की। [1]

1930 में गांधी जी के सत्याग्रह में भी भाग लिया। आर्थिक परेशानी से जूझते हुए बीए पास करने के बाद 55 रुपए मासिक पर हेडमास्टर की नौकरी जॉइन कर ली लेकिन वहां टिक नहीं पाए। 1934 में रजिस्ट्रार की नौकरी मिली 1943 तक उस पद बने रहे। लेकिन इस दौरान कलम आग उगलती रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रचार विभाग का डिप्टी डायरेक्टर बनाये गए लेकिन विद्रोही मानसिकता के दिनकर ने 1950 में इस्तीफा दे दिया।कॉलेज में हिंदी के विभागाध्यक्ष भी रहे।इसके बाद राज्यसभा के सदस्य बनाये गए। भागलपुर विश्वविद्यालय में कुलपति भी रहे।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

विचार – विमर्श

“आज जबकि कविता का पुरुषार्थ थक गया है और कविता की अपील को राजनैतिक विमर्शों ने विस्थापित कर दिया है , पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल — अनल किरीटी दिनकर बहुत याद आते हैं । उनकी गद्यकृति ‘संस्कृति के चार अध्याय’ के भूमिका – लेखक पं. जवाहर लाल नेहरू जब संसद की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए लड़खड़ा गए थे तो दिनकर जी ने उन्हें सँभाल लिया था । नेहरू जी के धन्यवाद ग्यापित करने पर दिनकर ने कहा कि “कोई बात नहीं पंडित जी ! राजनीति जब – जब लड़खड़ाती है , साहित्य उसे सँभाल लेता है ।” किन्तु आज तो साहित्य स्वयं को ही नहीं सँभाल पा रहा है । स्वाधीनता आंदोलन के दौरान ही नहीं , स्वातंत्र्योत्तर भारत की राजनीति में भी उनका सार्थक हस्तक्षेप बना रहा । यह नहीं कि वे राज्यसभा के मनोनीत सांसद थे बल्कि आपातकाल के दिनों में लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने नयी पीढ़ी में दिनकर की निम्न कविता से जागरण का शंखनाद किया —

दो राह , समय के रथ का घर्घर नाद सुनो ,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है ।

सन् 1962 में चीनी आक्रमण के समय दिनकर ने अपनी ओजस्वी कविताओं से भारतीय सेना का मनोबल बढ़ाया । तब चीनी रेडियो ने दिनकर जी पर सर्वाधिक आक्रोश जताया था । अतलांत भावनाम्बुधि के घूर्णित चक्रवाल ने चीन को अपना परिचय दे दिया -सुनूँ

क्या सिन्धु ! मैं गर्जन तुम्हारा ?
स्वयं युगधर्म की हुंकार हूँ मैं ।
कठिन निर्घोष हूँ भीषण अशनि का ,
प्रलय – गांडीव की टंकार हूँ मैं ।।

ज्योतिर्धनु की शिंजिनी बजाकर गाते हुए वे जातीय जीवन में ज्वार उठाते रहे और हिम्मत को ही तलवार बनाकर जातीय अस्मिता की नस – नस में तरल अग्नि दौड़ाते रहे । इस ज्वालामुखी के भीतर से थरथराता हुआ लोमहर्षक लावा बहता रहा । कविता के कुरुक्षेत्र में अविराम लेखनी की मौर्वी से पुष्पित अंगारों के हिम शीतल शायक बरसाते रहे और मनुष्यता की जय यात्रा के साक्षी बने —

मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूँ मैं ,
उर्वशी ! अपने समय का सूर्य हूँ मैं ।
अन्ध तम के भाल पर पावक जलाता हूँ ,
बादलों के शीश पर स्यंदन चलाता हूँ ।।[2]

अद्यतन एयर स्ट्राइक के संदर्भ में अभिनंदन इस पौरुष के भास्वर प्रतीक या रूपक बनकर उभरे । किन्तु बादलों की चादर ओढ़ कर सोने वाले चाँद से उसकी तबीयत का हाल पूछने का मन होता है । मातृ – संस्कृति के साथ व्यभिचार करने वाले इस देश के विदेशी प्रगतिशील आलोचकों ने दिनकर जी के सृजन कर्म की घोर उपेक्षा की । ये कपट मुनि देशभक्ति परक रचनाओं को उच्छल भावुकता की सतही कविता समझते थे । और तो और मार्क्सवादियों को दिनकर की साम्राज्यवाद विरोधी कविताएँ भी पसंद नहीं आतीं । मैनेजर पाण्डेय एक सवाल उठाते हैं कि हमें कैसी कविता चाहिए ? ऐसी जो सोए हुए को जगा दे या ऐसी जो जगे हुए को सुला दे । राष्ट्रवाद का कुपाठ रचने वाले और छांदस् काव्य की प्रकृत धारा का निषेध करने वाले बड़े बड़े नामवरों को मुक्तिबोध के ‘अँधेरे में’ कुछ अधिक दिखाई देता है । दिगंत फोड़कर आने वाले प्रकाश के प्रवाह से उनकी आँखें चौंधिया जाती हैं और आर्थिक , सामाजिक विषमता के विरुद्ध दिनकर का मेघ गर्जन उन्हें अश्रव्य रह जाता है —

हटो व्योम के मेघ पंथ से , स्वर्ग लूटने हम आते हैं ।
दूध – दूध ओ वत्स ! तुम्हारा दूध खोजने हम जाते हैं ।।
क्योंकि विपन्न शोषित और वंचित के उत्पीड़न से वे मर्माहत हो उठते हैं —
श्वानों को मिलता दूध – भात , भूखे बच्चे अकुलाते हैं ।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं ।।

दिनकर का सम्पूर्ण लेखन गम्भीर दायित्व बोध से परिस्फूर्त है । उपनिवेशवाद के समस्त आशयों के विरुद्ध मुखर प्रतिरोध दर्ज करने वाले दिनकर का काव्य विवेक भविष्य की दृष्टि से नियोजित है और अतीत का अनुनाद भी वर्तमान को कंपित करता है —-

उठा चरण यह सोच कि तेरे पद के निक्षेपों की
आगामी युग के कानों में ध्वनियाँ पहुँच रही हैं ।

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

तिमिर के बीच एक ज्योतिर्मय दाह खोजने वाले दिनकर भविष्य द्रष्टा चिंतक हैं —
एक हाथ में कमल , एक में धर्म – दीप्त विग्यान
लेकर उठने वाला है , धरती पर हिन्दुस्तान ।
यद्यपि छायावादी कवियों के उलट उनके अंतर्जगत में आध्यात्मिकता का निषेध है और फिर उनका उदार चिन्तन आज के भदेस राष्ट्रवाद से अपना पार्थक्य सूचित करता है । इसीलिए उनकी स्थापनाओं से सनातनी दुखी हैं । उनका सांस्कृतिक इतिहास भारत की सामासिक संस्कृति को अन्वेषित करता है । सामाजिक वैषम्य , शोषण , उत्पीड़न , अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध दहाड़ते हुए वे समतामूलक समाज का मानचित्र गढ़ते हैं ।लेकिन दुष्यंत कुमार से बातचीत में वे कहते हैं कि कविता को गद्य से नहीं , विग्यान से खतरा है । कविता यदि विग्यान का पूरा अनुकरण करेगी तो विग्यान बच रहेगा , कविता मर जाएगी । अर्थात् एक्यूरेसी (यथातथ्यता) के फैशन शो ने रूमानियत को परिदृश्य से पोंछ दिया । बिना रोमांटिक हुए कोई कैलाश सत्यार्थी या यूसुफ मलाला नहीं बन सकता । प्राणोत्सर्ग की सीमा तक समाज सृजन के लिए समर्पण और स्वस्ति बोध रोमानियत के बगैर सम्भव नहीं है ।यह बात नामवर सिंह और उनके अनुयायियों को समझ में नहीं आई । यद्यपि अपनी मानसिक संरचना में नामवर जी खुद रोमांटिक थे । वे किसी कृति को तब तक अच्छा नहीं कहते थे जब तक कि उस निर्णय के लिए वे अपना सब कुछ दाँव पर लगाने को तैयार न हों । आज की आधुनिकता को परिभाषित करते हुए वे कहते हैं कि साधु संतों का समाज में अब भी आदर है लेकिन जो साहित्य संन्यासी को व्यभिचारी दिखला सके वह लोकप्रिय और आधुनिक हो उठता है । बिडंबना यह है कि आज लेखक और संन्यासी दोनों ही व्यभिचारी और पाखंडी हो गए हैं और साहित्यिक भ्रष्टाचार के कारण साहित्य का कूड़ाखाना बहुत बड़ा हो गया है । बीफ और सोमरस के बिना तो शब्द फूटते ही नहीं । यह है साहित्य का यथार्थवाद । किसान – मजदूर और आम आदमी पर लिखी गई कविताएँ कितने किसान मजदूर पढ़ते हैं , यह तो शोध का विषय है लेकिन अब तो अभिजन आलोचक भी कतराने लगे हैं । यह नैतिक अंतर्दृष्टि भी शोषितों के मुक्तिबोध के अँधेरे में कहीं खो गई है । पृथ्वीराज रासो और भूषण की वीर रस की कविताओं में सजीवता इसलिए है कि चंदवरदायी और भूषण पृथ्वीराज चौहान और छत्रपति शिवाजी के साथ खड्गहस्त होकर संग्रामभूमि में जाया करते थे लेकिन आज के कवि समय जाया करते हुए कविता को टेबुल वर्क समझ बैठे हैं । [3] जिन्दगी की खुरदुरी जमीन पर नंगे तलवों चलना पड़ेगा । दिनकर की डायरी में उनके अंतर्बाह्य स्वरूप और उनके तनावपूर्ण पारिवारिक स्थितियों के कलह के अनेक गवाक्ष खुलते हैं । विश्वकवि दिनकर केवल भागलपुर विश्वविद्यालय के ही कुलपति नहीं थे , हिन्दी कवि विश्व के भी कुलपति हैं । वे आधुनिक भारतीय राजनीतिक – सांस्कृतिक नवजागरण और स्वाधीनता आंदोलन की आन्तरिक लय से निष्पन्न कवि हैं । उनकी क्रान्तिदर्शिता या राष्ट्रीय चेतना किसी उन्माद की निष्पत्ति नहीं , बल्कि उनकी अग्निगर्भिता इतिहास – बोध से संयमित है —
पूछो सिकता कण से हिमपति ,
तेरा वह राजस्थान कहाँ ?
वन – वन स्वतंत्रता दीप लिए
फिरने वाला बलवान कहाँ ?
तू पूछ अवध से राम कहाँ ,
वृन्दा बोलो घनश्याम कहाँ ?
ओ मगध ! कहाँ मेरे अशोक ,
वह चंद्रगुप्त बलधाम कहाँ ?

परिणाम

भारतीय संस्कृति की बहुवचनान्त छवियाँ हिमालय के रूपक में संयोजित हैं लेकिन स्वत्व के आराधक सूर्यकाव्य के ब्याज से आज के छिन्नमूल लेखन से पूछा जा सकता है कि पश्चिम की भाव छायाओं के ग्रहण से ग्रस्त अनुवादजीविता और मौलिक सृजन में क्या फर्क है ? कविता के कारीगर और कविता के कलाकार में मौलिक अन्तर क्या है ? कृष्णदत्त पालीवाल कहते हैं कि — "दिनकर का सृजन एक ऐसा अनोखा दस्तावेज है कि उसमें जातीय स्मृतियों, संस्कारों, सघन परंपरा – बोध, सामूहिक अवचेतन और जीवन लय की अंतर्ध्वनियों का वृन्दावन निरन्तर बहुवचनात्मक अनुगूँजों के साथ मौजूद है ।भारतीय इतिहास के न जाने कितने मिथकों , प्रतीकों से गहन संवाद और द्वंद्व हैं ।" गाँधी – विचार दर्शन का तेज उनकी काव्यानुभूति में गहराया तो ' कलिंग विजय ' की सृष्टि हुई । किन्तु शीघ्र ही उन्हें समझ में आ गया कि पाशविकता जब खड्ग उठा लेती है तो आत्मबल उसके सम्मुख बौना और लाचार हो जाता है ।

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

इसलिए वे अहिंसा के लिए हिंसा का रास्ता पकड़ना अनीति नहीं मानते ——
सच पूछो तो शर में ही बसती है दीप्ति विनय की ।
अथवा ——क्षमा शोभती उस भुजंग को ,
जिसके पास गरल हो ।
अकारण नहीं है कि अहिंसा के पुजारी इस देश के सारे देवी – देवताओं के आठ – आठ हाथों में आयुध हैं ।

'कुरुक्षेत्र' में युद्ध की सनातन समस्या से मुठभेड़ है । द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका ने दिनकर को स्तब्ध कर दिया था । भयंकर नरसंहार और मानवीय मूल्यों के विनाश ने उनकी आस्था को विचलित कर दिया था । आइंस्टीन और बर्ट्रेंड रसेल ने विश्व शान्ति के लिए बहुत प्रयास किया था । रसेल ने तो अपनी पुस्तक 'समाज पर विग्यान का प्रभाव' में स्पष्ट लिखा था कि यदि आणविक अस्त्रों का प्रयोग न रोका गया तो मनुष्य का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा । विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार कुरुक्षेत्र पर रसेल के विचारों का गहरा प्रभाव है और इसका अंतःसाक्ष्य भी उपलब्ध है ——
सावधान मनुष्य ! यदि विग्यान है तलवार ,[4]
तो इसे दे फेंक, तजकर मोह , स्मृति के पार ।
क्योंकि नादान शिशु के हाथ में तलवार नहीं दी जा सकती । वह इसकी तीखी धार से अपने अंग काट लेगा । अफगानिस्तान और इराक के ध्वंस के बाद अब उत्तरी कोरिया और इरान के साथ अमेरिका के तनाव शुभ नहीं हैं लेकिन शुभ लाभ वाली वणिक् बुद्धि तो मानवता के दूरगामी भविष्य से निरपेक्ष रहती आई है । मानवाधिकारों की सबसे अधिक वकालत करने वाला मनुष्यहंता वर्चस्व कापालिक की भूमिका में श्मशान – साधना करता रहा है । तानाशाही का निषेध करने वाला देश खुद सबसे बड़ा तानाशाह है और भस्मासुरों को वरदान देने वाला भी वही है । किन्तु युद्ध के कारकों का विश्लेषण करते हुए दिनकर जी कहते हैं —
रण रोकना है तो उखाड़ विषदंत फेंको
वृक – व्याघ्र भीति से मही को मुक्त कर दो ।
पाक प्रवर्तित आतंकवाद के संदर्भ में इसे ठीक से समझा जा सकता है । आकस्मिक नहीं है कि अस्तित्ववाद से प्रेरित होकर ही धर्मवीर भारती ने 'अन्धायुग' की रचना की थी ।

बीसवीं शताब्दी का भारत दिनकर के साहित्य में अनेकायामी छवियों के साथ बोलता है । सांस्कृतिक संवेदना को अर्थ – विस्तार देते हुए 'रश्मिरथी' का नायक कहता है ——
पूछो मेरी जाति शक्ति हो तो मेरे भुजबल से ,
रवि समान दीपित ललाट से और कवच – कुंडल से ।
पढ़ो उसे जो झलक रहा है मुझमें तेज प्रकाश ,
मेरे रोम रोम में अंकित है मेरा इतिहास ।।
सूर्यपुत्र को सूतपुत्र के रूप में रेखांकित करने पर यह उसकी पीड़ा का परावर्तन है , जहाँ अभिशाप पौरुष को उद्दीप्त करता है । कर्ण वर्ण व्यवस्था का साक्षात् खंडन है । मैत्री धर्म के निर्वाह के लिए वह अपने भाइयों से सचेत रूप से लड़ता है और प्राणोत्सर्ग कर देता है लेकिन अपने शत्रु अर्जुन के संहार के लिए विजातीय तक्षक नाग का सहयोग ठुकरा देता है । दानवीर कर्ण सूर्य की तरह ही एक तेजस्वी चरित्र है ।
रश्मिरथी में भी यह स्थापना दी गई है कि युद्ध जगत से दुख – दैन्य के निवारण के लिए नहीं , अपने अभिमान की संतुष्टि , सत्ता – लोलुपता और भौगोलिक सीमा के विस्तार के लिए किए जाते हैं । तथापि वे युधिष्ठिर की शान्तिकामी नीति से असहमत होते हुए अर्जुन और भीम को लौटाने की प्रार्थना करते हैं ——
कह दे शंकर से करें आज , वे प्रलय नृत्य फिर एक बार,
सारे भारत में गूँज उठे , हर हर बम का फिर महोच्चार ![5]
आज फिर एक बार ऐसा लगता है कि हर हर बम को रूद्राक्ष की जगह अणु बम की मोटी माला धारण कर पाकिस्तान में नर्तन करना पड़ेगा । जब चीन के अप्रत्याशित आक्रमण ने पंचशील के हवाई आदर्शों की धज्जियाँ उड़ा दी तो दिनकर गरज उठे । 'परशुराम की प्रतीक्षा' क्लीवता की गर्द झाड़ते हुए शक्ति का एक दर्पोद्धत आख्यान है । अग्निगर्भा पौरुष दिनकर काव्य का स्थायी भाव है और उनकी लेखनी क्रान्तिवीरों की ही अभ्यर्थना करती है ——
कलम आज उनकी जय बोल ।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

जला अस्थियाँ बारी बारी ,
छिटकायी जिनने चिनगारी ,
जो चढ़ गए पुण्यवेदी पर
लिए बिना गरदन की मोल ।
कलम आज उनकी जय बोल ।।

यह एक भारतीय आत्मा माखनलाल चतुर्वेदी , बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और रामनरेश त्रिपाठी की काव्य परंपरा की उत्तर संरचना है । हिन्दी में दो ही राष्ट्रकवि हुए और मैथिलीशरण गुप्त दिनकर के काव्य गुरु थे । यद्यपि चेतना के स्तर पर वे इकबाल , जोश , हाली और नजरुल इस्लाम से परिस्फूर्त थे । देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' राष्ट्रकवि दिनकर के व्यक्तित्व और कृतित्व को परिभाषित करते हुए ठीक कहते हैं — " अग्निकिरीटी दिनकर सूर्य के पर्याय ही नहीं , सूर्य के समकक्ष भी हैं । वे विभापुत्र थे — जागरण के गायक । उन्होंने राष्ट्र के यौवन में ज्वार और उफान पैदा किया था , म्रियमाण जाति को नई प्राणोष्मता प्रदान की थी और जड़ता को उड़ान भरने के लिए चेतना के पंख दिए थे । श्मशान में जीवन राग का आलाप भरने वाले इस शब्द शिल्पी ने रक्त की कर्दम में रजत श्रृंगी लेकर भैरव नाद किया था । जब इनके अन्य शब्द – सहचर शिथिल परियों से निश्चिंत होकर प्रणयबद्ध मुद्रा में श्रृंगार गीत लिख लिख कर रति विलाप कर रहे थे तो इन्होंने उनके प्रीति – वेश्यों के रुद्ध कपाटों पर जागरूक प्रहरी की भूमिका निभाई थी । मंच पर शार्दूल गर्जना करने वाले इस छांदस् कोविद ने भावना के स्थान पर कर्त्तव्य को और हृदय के स्थान पर बुद्धि को ही प्राथमिकता दी और प्रेय की पुकार पर श्रेय का वरण किया । "

युगधर्म की हुंकार भरने वाले दिनकर ने कविता को व्यापक मंच प्रदान किया । देश की आवाज बनने के लिए जरूरी था कि कविता को बोधगम्य और सम्प्रेष्य बनाया जाए और काल्पनिक अनुभूति की जगह जीवन की सच्ची अनुभूतियों की प्रतिष्ठा हो । दिनकर काव्य – भाषा को बोल – चाल की भाषा के करीब ले आए । उनकी भाषा में एक प्रासादिकता है जो कई बार विरलता का आभास देती है । यह अभिव्यक्ति उर्वशी में सघन हो उठी है । अपनी मानवीय लघुता में विराट दिनकर जी का सांस्कृतिक चिंतन 'संस्कृति के चार अध्याय' में प्रतिफलित होता है । संस्कृतियाँ प्रभाव ग्रहण करती हैं और दूसरी संस्कृतियों की उपलब्धियों के सहारे अपनी अंतर्दृष्टि का विकास करती हैं , अपने अनुभव को समृद्धतर बनाती हैं । इस अंतःक्रिया या संग्राहकता को परावर्तित करती इस कृति में दिनकर जी की उदार दृष्टि संलक्ष्य है । दिनकर के विषय में अग्येय ने लिखा है कि एकाधिक प्रतिष्ठानों के विरुद्ध अपनी आवाज उठाता हुआ यह प्रभापुंज न जाने प्रतिष्ठान का प्रतिनिधि अधिक रहा या कि स्वयं ही एक प्रतिष्ठान रहा । स्वाधीन भारत की राजधानी दिल्ली की कड़ी भर्त्सना करते हुए वे कहते हैं —
वैभव की दीवानी दिल्ली ,
कृषक मेध की रानी दिल्ली ,
अनाचार , अपमान , व्यंग्य की
चुभती हुई कहानी दिल्ली !

व्यवस्था में रहकर व्यवस्था का विरोध एक नैतिक साहस की मांग करता है कि दिल्ली में रोशनी और शेष भारत में अँधियाला है । क्योंकि दिनकर का स्पष्ट मत है —
समर शेष है , नहीं पाप का भागी केवल व्याध ,
जो तटस्थ हैं , समय लिखेगा उनका भी अपराध ।

हम वर्चस्वी सत्ता के असंगत कार्यों को रोक नहीं सकते पर टोक तो सकते ही हैं । कवि क्रान्तिद्रष्टा होता है , क्रान्तिकारी नहीं । नयी कविता के पुरोधा अग्येय कहते हैं कि दिनकर ने कविता को प्रतिष्ठा दिलाने का काम किया । उनकी राष्ट्रीय चेतना और व्यापक सांस्कृतिक दृष्टि , उनकी वाणी का ओज और काव्य भाषा के तत्वों पर बल , उनका सात्विक मूल्यों का आग्रह उन्हें पारंपरिक रीति से जोड़े रखता था तो दूसरी ओर परिवर्तन के लिए उनका अधैर्य , बुराइयों के प्रति उनका आक्रोश और जीवन की नियामतों के प्रति उनका प्रबल आकर्षण —- उन्हें नई रीति से जोड़ता था । इस प्रकार उनका काव्य पुराने और नए के बीच एक सेतु था ।

और अंत में दिनकर जी की नए भाव – बोध की संश्लिष्ट संरचना उर्वशी का साक्षात्कार कर लें । उर्वशी जिसे अपने वैयक्तिक जीवन में सभी गले लगाना चाहते हैं लेकिन सार्वजनिक जीवन में उसे स्वीकार करने में संकोच करते हैं । भारतभूषण अग्रवाल कहते हैं कि यह एक प्रौढ़ कवि की प्रौढ़ कृति है जो हिन्दी काव्य की प्रौढ़ता की घोषणा करती है । इस क्लासिकल काव्य के विषय में डा. बच्चन सिंह कहते हैं कि यह हिन्दी का अब तक का सर्वश्रेष्ठ काव्य है — न भूतो , न भविष्यति कहता , यदि हिंदी के भविष्य पर भरोसा न

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

होता । आलोचकों का एक वर्ग 'उर्वशी' को रामचरितमानस के बाद कामायनी के समकक्ष नहीं तो उससे कुछ ही घटकर मानता है और फिर यदि छायावादोत्तर कविता के संदर्भ में उर्वशी का मूल्यांकन करना हो तो वे उसे असंदिग्ध भाव से इस दौर की सर्वोत्कृष्ट कृति करार देते हैं । मुझे लगता है कि आधुनिक युग के कुछ क्लासिक काव्यों को विश्व साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है । कामायनी के अतिरिक्त निराला की 'राम की शक्ति पूजा' , पंत जी का 'परिवर्तन' , दिनकर की उर्वशी , अग्येय की 'असाध्यवीणा' , धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया' , नरेश मेहता का 'महाप्रस्थान' और कुँवरनारायण का 'बाजश्रवा के बहाने' ऐसी ही कालजयी कृतियाँ हैं । इसमें सूक्तिप्रिय धूमिल की कुछ रचनाएँ , दुष्यंत कुमार की कुछ गजलें और नागार्जुन की कविता 'बादल को घिरते देखा है' को भी शामिल किया जा सकता है । पंत , महादेवी और दिनकर को पुरस्कृत करके भारतीय ग्यानपीठ स्वयं सम्मानित हुआ था । राष्ट्रकवि दिनकर का काव्य परिसर पूरे विश्व को आच्छादित करता है । क्योंकि वे वटवृक्ष की भाँति जड़ों से गहरे जुड़े थे । उत्तरकालीन केदारनाथ सिंह की व्याप्ति भी वैश्विक थी ।

निष्कर्ष

किन्तु जनवरी, 1964 की 'कल्पना' में प्रकाशित 'उर्वशी परिचर्चा' समकालीन कविता में नए और पुराने काव्य – मूल्यों का सर्जनात्मक टकराव है जिसमें सार्थक और प्रसंगानुकूल मूल्यों के विकास की संभावना निहित है । कल्पना के 138 वें अंक में भगवतशरण उपाध्याय का मनोव्याधि से पीड़ित एक उच्चाटन परक समीक्षा – लेख छपा था । रघुवीर सहाय की आपत्ति थी कि इस लेख में उर्वशी को काव्य नहीं , इतिहास का ग्रंथ मानकर उसका मूल्यांकन किया गया है , जो अनर्गल है । धर्मवीर भारती भी इस काव्येतर कसौटी से असंतुष्ट हैं । देवीशंकर अवस्थी लिखते हैं कि उपाध्याय जी ने पूरे उर्वशी काव्य को एक दृष्टि की समग्रता, अंतर्योजना, मूल्य – साँचे से सम्पृक्ति के आधार पर नहीं जाँचा । वे कभी तो कथा – स्रोतों की खोजबीन करके बहुत कुछ चोरी का माल साबित करने पर तुलते हैं तो कभी कवि के भाषा संबन्धी अग्यान का मजाक उड़ाने लगते हैं । प्रभाकर माचवे को इसी भाषा में वक्तृत्व गुण दिखाई देता है तो रामविलास शर्मा को निराला के बाद उर्वशी में ही मेघमंद्र स्वर सुनाई पड़ता है । मुक्तिबोध कहते हैं कि भगवतशरण जी बाहर से भीतर की यात्रा के पूर्व या अनन्तर यदि सावधानी से भीतर से बाहर की यात्रा भी कर लेते तो उनकी आलोचना में कमजोरियाँ न आ पातीं । काव्य कृति को व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में रखकर परखते हुए मुक्तिबोध ने काव्य विषयक मूल्यांकन को नैतिकता का एक नया आयाम प्रदान किया जिसमें निहित अर्थापत्तियाँ काफी दूरगामी हैं —" पुरूरवा और उर्वशी वागाडंबर द्वारा , शब्द सुख द्वारा रति सुख का पुनः – पुनः बोध करते से , सांस्कृतिक ध्वनियों और प्रतिध्वनियों का निनाद करते हैं । मानो उनके रति – कक्ष में भोंपू लगे हों जो शहर और बाजार में आडंबर पूर्ण कामात्मक संलाप का प्रसारण – विस्तारण कर रहे हों । उन्हें वृहत् आयोजन के साथ प्रदीर्घ पंक्तियों में समारोह पूर्वक चलती भाषा वागाडंबर लगती है और कामात्मक मनोरति कृत्रिम मनोविग्यान पर आधारित । पलटकर मुक्तिबोध से पूछा जा सकता है कि आप की काव्य भाषा और यह आलोचना – भाषा वागाडंबर नहीं तो और क्या है ? नामवर सिंह के 'कविता के नये प्रतिमान' के साक्ष्य से नेमिचंद जैन की दृष्टि में इस पंचांकी नाटक (उर्वशी) का तीसरा अंक केन्द्र ही नहीं , उसका सारभाग है । इसमें विपुल मार्मिक स्थल हैं ।लेकिन इस में अनावश्यक और अनर्गल प्रलाप की मात्रा अधिक है और उसमें आन्तरिक असंगति, अस्पष्टता, उद्देश्य तथा उसके कार्यान्वित होने में शिथिलता , भावगत और रूपगत स्फीति उसके सौन्दर्य को आच्छन्न कर लेती है । मुझे लगता है कि यह टिप्पणी ही अनावश्यक और अनर्गल है ।लेकिन इस में थोड़ा बहुत सत्यांश है । "आलोचक की आस्था" शीर्षक अपने ग्रन्थ में डा. नगेन्द्र ने उर्वशी पर विस्तार से विचार किया है और सहृदयता से उसका मूल्यांकन किया है लेकिन निष्कर्ष देते समय वे थोड़े अनुदार हो गए हैं । यह सही है कि अपनी निष्पत्ति में महत्पुरुषार्थ काम को दिनकर चरम पुरुषार्थ न मानते हुए भी रचना – प्रक्रिया में उसे प्रतिफलित कर जाते हैं और इस प्रकार समाहिति बिखर जाती है लेकिन उद्वेलक प्रभाव और अंतर्मंथन की शक्ति को लेकर डा. नगेंद्र उर्वशी को अद्वितीय घोषित करते हैं । उद्दाम ऐन्द्रिकता , सूक्ष्म कल्पनाशीलता , समृद्ध बिम्ब योजना और समर्थ भाषा ने उर्वशी को विराट चित्रशाला बना दिया है और नगेंद्र इस पर मुग्ध हैं —— चुम्बनों के चिह्न पड़ जाते त्वचा पर । विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं कि दिनकर ओज के कवि हैं और वह ओज उर्वशी में भी अंतर्निष्ठ है । रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उर्वशी पर एक मार्मिक कविता लिखी थी और शंभूनाथ सिंह ने भी समय की शिला पर व्योम मंडल से उतरती हुई मेघाच्छन्न उर्वशी का मधुर चित्र बनाया था । कालिदास ने तो 'विक्रमोर्वशीयम्' ही रच डाला । दिनकर द्वंद्व के कवि हैं , समाहिति के नहीं । समाधान उनका अनुभूत नहीं है । परिणति के रूप में साधन में ही सिद्धि ढूँढ़ने के

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 10, October 2016

कारण वैचारिकी में विचलन और उर्वशी की प्रतिमा में दरार पड़ जाती है लेकिन तब तक प्रतिमा पूजन का काम संपन्न हो चुका होता है । इस प्रकार वैचारिक अन्विति और समाहिति के अन्ततः बिखर जाने के बावजूद उर्वशी अंतर्मंथन की अद्‌भुत शक्ति और उद्वेलक प्रभाव की दृष्टि से सम्पूर्ण छायावादोत्तर हिन्दी साहित्य में अद्वितीय ठहरती है । काम के मृण्मय और चिन्मय रूपों के संश्लेषण , भाव – संवेदन की सूक्ष्मता , अनेकरूपता तथा सघन बिंब – विधान की दृष्टि से उर्वशी अत्यंत वांछनीय है । अवचेतन मन में घुमड़ने वाले अन्धे संवेदनों को चेतन मन के आलोक में प्रस्तुत करने , काम के द्वंद्व और अरूप झंकृतियों को सक्षम भाषा और रमणीय रूप बंध में विन्यस्त करने व दैहिक काम के पारमार्थिक उन्नयन के अंतर्दर्शन के कारण उर्वशी हिन्दी काव्याकाश में बहुत ऊपर उठ जाती है ।"[6]

संदर्भ

1. जीवनी एवं रचनाएँ Archived 2006 at the Wayback Machine अनुभूति पर.
2. ↑ "साहित्य अकादमी पुरस्कार". मूल से 7 अगस्त 2006 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 फ़रवरी 2009.
3. ↑ Sahitya Akademi Awards 2007 Archived 2007-07-04 at the Wayback Machine साहित्य अकादमी पुरस्कारों का आधिकारिक जाल स्थल
4. ↑ "Top 100 famous epics of the World" [विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य] (अंग्रेज़ी में). मूल से 14 दिसंबर 2013 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 9 दिसम्बर 2013.
5. ↑ वो थे दिनकर, जिन्होंने संसद में नेहरू के खिलाफ पढ़ी थी कविता 2011
6. ↑ नई दुनिया, सम्पादकीय पृष्ठ, 212, 2010